Dr. Vandana Suman
Associate professor
Dept. of Philosophy
H. D. Jain College, Ara
B. A. Part – III (Hons)
Paper – V
Philosophy of Religion

1

"Forms of Primitive Religion" (आदिम धर्म के रूप)

प्रारंभिक धर्म प्राचीनकाल के व्यक्तियों की धार्मिक भावना को प्रकाशित करता है। अशिक्षित एवं असभ्य मानव का धर्म होने के कारण इस धर्म में अंधविश्वास, जादुटोना की मात्रा अधिक है। प्रारंभिक धर्म को जाति सम्बन्धी धर्म भी कहा जाता है। प्राचीन काल के लोग दल बाँधकर रहा करते थे प्रारंभिक धर्म का विकास विभिन्न दलों में हुआ इसलिए इस धार्मिक अवस्था को जातीय धर्म कहा जाता है। यह धर्म प्रारम्भिक धर्म का समानार्थक है। प्रारम्भिक धर्म को आदिम धर्म कहना प्रमाणसंगत है। प्रारम्भिक धर्म आदिम मनुष्य के धार्मिक व्यवहारों का अध्ययन करता है।

आदिम धर्म के दो अर्थ हैं प्रथम आदिम धर्म उसे कहा जाता है जो आदि काल से पाया जाता है। द्वितीय आदिम धर्म उसे कहते हैं जो अभी भी प्रारम्भिक अवस्था या बीजावस्था अथवा गर्भावस्था में पाया जाता है। अतः आदिम धर्म का अर्थ है जो धर्म अति प्राचीन है या जो अभी भी अविकसित अवस्था में पाया जाता है। वस्तुतः आदिम धर्म हमें आज भी दक्षिण को मिलता है। आदिम धर्म के विभिन्न रूपों का विश्लेषण करने पर उसमें अनेक सामान्य लक्षण

देखने को मिलते हैं जो इसप्रकार हैं:→

1. आदिम 'धर्म' धर्म का शुद्ध रूप नहीं है— इसमें धर्म के साथ ही जादू, विज्ञान, कला, दर्शन आदि अनेक बातें एक एक साथ मिली हुई देखी जाती हैं। दर्शन, धर्म, जादू, विज्ञान इत्यादि में भेद किये बिना ही आदिम जातियाँ अपनी अनुभूतियों को अपने धर्म के माध्यम से अभिव्यक्त करती हैं। आदिम धर्मों में धर्म और जादू, विशेषकर इसप्रकार एक दूसरे से लिपटा हुआ दीख पड़ता है कि इन्हें एक दूसरे से अलग करना कठिन है। मंत्र, जप, तप, बलि इत्यादि प्रक्रियाओं को "जादू" माना जाय या "धर्म"? फाहियान का कथन है कि न तो जादू को धर्म से पूर्व माना जा सकता है और न धर्म को जादू से पूर्व कहा जा सकता है। ये एक दूसरे से घुले-मिले दृष्टिगोचर होते हैं।

2. विलक्षण तथा असाधारण घटनाओं को अप्राकृतिक रहस्यमयी शक्तियों के आधार पर समझना— आदिम धर्म के धार्मिक व्यवहारों में तार्किक विचारों का अभाव रहता है। इसके विपरीत इन घटनाओं के प्रति भय, संवेग, भय विस्मय तथा चकित होने का भाव अधिक रहता है। आदिम मानव प्रकृति की असाधारण घटनाओं के बीच कारण-कार्य सम्बन्ध को नहीं समझ पाता

और इनकी व्याख्या अप्राकृतिक रहस्यमयी शक्तियों के आधार पर करता है। अतः बीमारी, वर्षा, गर्भधारण आदि घटनाओं की व्याख्या रहस्यमयी शक्तियों के आधार पर होती है। प्रायः प्रकृति में घटित होनेवाली पूर्ववर्ती घटना को कारण और अनुवर्ती घटना को कार्य माना जाता है।

(3) आदिम धर्म में जिन अप्राकृतिक रहस्यमयी शक्तियों या दैविक शक्तियों में विश्वास पाया जाता था उन्हें आध्यात्मिक शक्तियाँ (Spiritual power) नहीं कहा जा सकता। आदिम जातियाँ दैविक शक्तियों को अदृश्य समझती हैं और यह मानती है कि ये स्वतंत्र रूप से कहीं भी भ्रमण कर सकती हैं। फिर भी यह समझा जाता है कि ये अपने आप को दैहिक शक्ति (Physical power) के रूप में अभिव्यक्त कर सकती है। अतः आदिम धर्म में जिन दैविक शक्तियों में विश्वास पाया जाता है उन्हें पूर्णतः आध्यात्मिक नहीं माना जा सकता।

(4) आदिम धर्म में दैविक शक्तियों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रसन्न करने की चेष्टा की जाती है — मन्त्रों द्वारा अलौकिक शक्तियों को प्रसन्न कर वर्षा लाने,

संक्रामक रोग दूर करने इत्यादि की कोशिश की जाती है। आदिम धर्म में व्यक्त दैविक शक्तियों को मंत्र, जप-तप, बलि, स्तुति, गीत-गान आदि के द्वारा प्रसन्न करने का प्रयास करता है जिससे उनकी व्यक्तिगत तथा जातीय आवश्यकताओं की पूर्ति हो, और वह प्राकृतिक घटनाओं को अपने वश में कर सके। अतः उसके धार्मिक कर्मकाण्ड सोद्देश्य होते हैं। रहस्यमयी शक्ति को प्रसन्न कर वह उससे कृपा की आकांक्षा रखता है। आदिम जातियों को प्रायः तीन प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता था — आहार, काम-जीवन तथा समाज संगठन। आदिमकाल में शिकार का जीवन ही आहार के लिए अपनाना पड़ता था। बड़े-बड़े पशुओं के शिकार में व्यक्तियों का सामूहिक प्रयास रहता था। अतः आदिम मानव यह समझता था कि शिकार के समय जाति के सदस्यों में विशेष शक्ति के संचार में रहस्यमयी तथा अलौकिक शक्ति का योगदान होगा। इसीप्रकार काम-जीवन भी रहस्यमय माना जाता है। आदिम जातियों में रतिक्रिया और गर्भधान के बीच के सम्बन्ध का ज्ञान नहीं पाया जाता। प्रायः वे रतिक्रिया को रहस्यमय समझते हैं और इसे दैविक नियंत्रण से जकड़ दिया जाता है। फिर, ऐसे प्राकृतिक प्रकोप जिनसे

सम्पूर्ण जाति के विनाश की सम्भावना रहती है जैसे - बाढ़, भूकम्प, महामारी इत्यादि रहस्यमय समझे जाते हैं। इनसे समाज की रक्षा हेतु, तंत्र-मंत्र, जाप-पूजा का सहारा लिया जाता है।

5. आदिम धर्म में प्रत्येक जाति के अलग-अलग देवता होते हैं एक जाति के लोग अन्य जाति द्वारा मान्य शक्तियों में विश्वास नहीं कर सकते हैं। एक ऐसे धर्म की कल्पना करना जो सभी जातियों के लिये मान्य हो उनके विचारों में मूर्खता-पूर्ण एवं निरर्थक ही समझा जायेगा अतः हर जाति अपने देवता के लिये थी और हर देवता उसी जाति के लिये था।

(6) आदिम धर्म में जिन शक्तियों को स्वीकार किया जाता है उनकी प्रकृति अस्पष्ट ही रहती है - उनके विषय में अधिक से अधिक यही कहा जा सकता है कि उनको पवित्र माना जा सकता है। वे छाया के समान हैं और आदिम जाति उनके विषय में भय और अनुग्रह, कृपा और कोप दोनों पक्ष पाये जाते हैं। आदिम धर्म में जिस अलौकिक शक्ति में विश्वास पाया जाता है वह अनिश्चित और व्यापक होती है तथा उसे पवित्र की संज्ञा दी

जा सकती है। इस शक्ति को कल्याणकारी तथा अकल्याणकारी दोनों माना जाता है। अतः इसके प्रति आदर और भय दोनों के भाव रहते हैं। इसके साथ ही इस शक्ति के विषय में इतना और कहा जा सकता है कि मानव से कोई अधिक श्रेष्ठ या उच्चतर नहीं कहा जा सकता। फिर भी वह शक्ति मानव से अधिक शक्तिशाली और चतुर समझी जाती है।

आदिम धर्म की अनेक विशेषताएँ हैं—

1. पूर्णतः जादू पर आधारित— धर्म और जादू का प्रारम्भिक धर्म में सामंजस्य इस प्रकार हुआ है कि एक को दूसरे से अलग करना कठिन है। फीटिशवाद से जादू का इतना प्रभाव पड़ा है कि इसे धर्म न कहकर जादू कहना अधिक युक्तिसंगत प्रतीत होता है। धर्म में जादूभरी प्रवृत्तियों की प्रधानता से धार्मिक भावना का विकास रुक जाता है।

2. विभिन्न प्रकार के अन्धविश्वास से परिपूर्ण— प्राचीन काल के लोगों की यह धारणा थी कि यदि किसी व्यक्ति का बाल या नाखून उसके शत्रु के हाथ में आ जाय तो उस व्यक्ति को हानि पहुँचती है, जिसके बाल या नाखून रहते हैं। यदि कोई व्यक्ति के चित्र का उपहास करता है

अथवा चित्र पर किसी प्रकार का प्रहार करता है तो उपहास या प्रहार उस व्यक्ति का होता है जिसका वह चित्र है। बच्चों को दीर्घायु बनाने के लिये कुछ औरत अपना पका बाल जन्मजात शिशु को रगड़ना आवश्यक समझती थी। प्रारम्भिक वर्ग की अन्धविश्वासपूर्ण धारणायें वर्तमान मानव को हास्यास्पद प्रतीत होती है।

(3) कार्यकारण सिद्धान्त विभिन्नतापूर्ण तथा दोषपूर्ण — वैज्ञानिक दृष्टिकोण से कारण को पूर्ववर्ती माना जाता है, नियत तथा उपाधिरहित और सान्निहित माना जाता है। परन्तु प्रारम्भिक वर्ग में कारण के लिये पूर्ववर्ती का होना ही पर्याप्त माना जाता है। इसप्रकार यदि एक घटना के बाद दूसरी घटना आती है तो एक को कारण तथा दूसरे को कार्य कहा जाता है।

(4) देवताओं का विचार भौतिक वस्तु के आधार पर — प्राचीनकाल के लोगों के आत्मा सम्बन्धी विचार हमारे आत्मा सम्बन्धी विचार से पूर्णतः भिन्न है। इनकी आत्मा कोई आदि आत्मिक जीव नहीं हुआ करती है। वे ऐसी आत्माओं की कल्पना करते है जो अदृश्य है। परन्तु उस आत्मा का आधार उन्हें

किसी न किसी वस्तु को माना है।

(इ) वस्तुओं की आराधना उद्देश्य से की जाती है- प्राचीनकाल में लोग दुश्मनों का सामना तथा अनेक वस्तुओं के अभाव को पूरा करने के लिये देवताओं के सम्मुख प्रार्थना करते हुये दीख पड़ते हैं। इन्हें न तो ईश्वर से मिलने की कोई लालसा रहती है और न स्वर्ग की कल्पना करते हैं। दुश्मनों पर विजय पाने के लिये तथा अपनी स्वार्थसिद्धि के लिये ये सर्वदा प्रयत्नशील रहते हैं। फिर प्रारम्भिक धर्म का ईश्वर सम्बन्धी विचार अत्यन्त ही अस्पष्ट एवं विरोध पूर्ण है ईश्वर को न कोई रूप है और न व्यक्तित्व व्यक्तित्व के अभाव में ईश्वर गुणों से हीन प्रतीत होता है।

प्रारम्भिक धर्म पर जब हम दृष्टिपात करते हैं तो धर्म के विभिन्न रूप पाते हैं। यद्यपि प्रारम्भिक धर्म के विभिन्न रूपों की निश्चित संख्या निर्धारित करना कठिन है प्रारम्भिक धर्म के मुख्य रूप पाँच हैं—

1. जीववाद (Animism)
2. प्राणवाद (Spiritism)
3. फीटिशवाद (Fetishism)
4. मानावाद (Manaism)
5. टोटमवाद (Totemism)

~~(1) जीववाद (Animism) [illegible] (जीवित [illegible])~~